गायत्रीतीर्थ शान्तिकुञ्ज

youth.awgp.org

माँ की संस्कारशाला

सप्ताह-2

मानवीय मूल्य

दया

Online पढ़ने हेतु QR कोड स्कैन करें।

• मानवीय मूल्य • वेदवाक्य • पहेली / मुहावरे • कहानी • मनोवैज्ञानिक समाधान
• मूल्यपरक कविता / गीत / लोरी • अभ्यास के बिन्दु

शान्तिकुञ्ज-हरिद्वार

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं
भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्

उस प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी,
पापनाशक, देवस्वरूप, परमात्मा को हम अपने अंतःकरण में धारण करें।
वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर प्रेरित करे।

विषय सूची - द्वितीय सप्ताह

द्वितीय सप्ताह :
मानवीय मूल्य - दया.......36

माँ से निवेदन 37

दया, धर्म का मूल 38

प्रथम दिवस :
कहानी : दया का फल.......40

द्वितीय दिवस :
कहानी : बालक नानक की दयालुता 42

तृतीय दिवस :
कहानी : रन्तिदेव की उदारता 44

चतुर्थ दिवस :
कहानी : धर्म पर आस्था रखने वाले दया ना छोड़ें.......45

बच्चों की समस्याओं के मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक समाधान :
मनुष्यता को निर्दयता से कलंकित न करें.......47

पंचम दिवस :
कहानी :दयालु राजकुमार सिद्धार्थ.......50

षष्ठम दिवस :
कहानी : दयालु राजा शिवि.......52

सप्तम दिवस :
कहानी : गायों की गोष्ठी.......54

मूल्यपरक कविता :
माँसाहार का परिणाम.......56

गीत :
विश्व शांति का 58

अभ्यास के बिन्दु.......59

द्वितीय सप्ताह

मानवीय मूल्य

दया

माँ से निवेदन

मुरगी काटना बच्चों के लिए एक खेल बन गया । कभी वह क्रूर हाथों से अपने को छुड़ाने का प्रयास करती, कभी अपने पंख फड़फड़ाती । बच्चे यह देख-देखकर हँस रहे थे । जब मुरगी लहू-लुहान हो गई तो वे उदास हो गए । उन्हें अवश्य ऐसा प्रतीत होने लगा कि पिता जी द्वारा अवश्य मुरगी को यातना दी गई है । मुरगी दम तोड़ चुकी थी ।

पिता किसी कार्य से नीचे चला आया । छुरी वहीं पड़ी हुई थी । बच्चे जिस नाटक को अपने पिता द्वारा करते देख चुके थे, उसी का अभ्यास उनकी अनुपस्थिति में करने लगे । बड़े लड़के ने छोटे को जमीन पर लिटा लिया । अपने हाथ में छुरी लेकर वह उसी तरह छोटे भाई को दबाकर बैठ गया, जैसे पिता जी मुरगी को दवाए हुए थे ।

गरदन पर छुरी चलने लगी । जब उसकी गरदन कटने लगी, खून निकलने लगा तो उस लड़के को असह्य पीड़ा हुई । उसने जोर से चीखना-चिल्लाना शुरू किया । नीचे माँ अपने चार माह के छोटे बच्चे को स्नान करा रही थी। सामने परात में पानी भरा रखा था । जब उसके कान में चीखने- चिल्लाने की आवाज पड़ी तो वह व्याकुल होकर अपने छोटे बच्चे को वहीं छोड़ ऊपर दौड़ी । देखा, चार वर्षीय बालक दम तोड़ चुका है । चारों ओर खून बह रहा है । अपनी माँ को आता देख बड़ा बालक घबरा गया । माँ अवश्य उसे बुरा- भला कहेगी, डॉट-डपट करेगी । अतः वह बचने के लिए सहमकर छत के नीचे कूद पड़ा ।

बेचारी माँ समझ नहीं पाई कि क्या करे । वह छत से नीचे उतरने के लिए जैसे ही सीढ़ियों की ओर बढ़ी कि एक बार जोर से चीख सुनाई पड़ी । जब तक वह नीचे पहुँची वह सात वर्षीय बालक भी अपनी लीला समाप्त कर चुका था । उसका सिर नीचे पत्थर से टकराया और सदैव के लिए माता-पिता से अलग हो गया ।

माँ की स्थिति पागलों सरीखी हो गई थी । दो-दो चलते- फिरते, हँसते-खेलते बच्चों को दम तोड़ते देख चुकी थी । अब उसमें इतना साहस नहीं रहा था कि वह कुछ कर सके । उसे चक्कर आ गया और वह भी वहीं लुढ़क गई । थोड़ी देर में होश आया, आँख खोली तो उसे ध्यान आया कि वह गोद वाले बच्चे को स्नान कराते-कराते वहीं छोड़ आई है । जैसे-तैसे अपने को सँभाल कर वहाँ तक पहुँची कि वह अवाक् खड़ी देखती रही । दुर्भाग्य ने अभी भी उसका पीछा नहीं छोड़ा था ।

जिस बच्चे को पानी में स्नान कराते छोड़ गई थी, वह इतना छोटा था कि स्वयं उठकर न तो बैठ ही सकता था और न अपने आप उस परात से बाहर निकल सकता था । जब पानी उसके नाक, कान और मुँह में भरने लगा, बेचारा रोया- चिल्लाया, हाथ-पैर चलाता रहा, पर वहाँ उसकी सहायता करने वाला कोई न था । पानी में गोते खाकर उसने भी इस परिवार से सदैव के लिए नाता तोड़ लिया था ।

जब दुर्भाग्य ने माँ को हृदय के तीनों टुकड़ों से अलग कर दिया । अब रोने-चिल्लाने से क्या लाभ था ! माता-पिता जैसा कार्य करते हैं, उसी को देखकर बच्चे करने का अभ्यास करते हैं । उन्हें अच्छाई-बुराई का ज्ञान कहाँ होता है! यदि हम चाहते हैं कि बच्चों में सत्प्रवृत्तियों का विकास हो तो हमें अपने को सुधारना होगा।

माताओं से निवेदन है की अपने घर-परिवार में संवेदनापूर्ण वातावरण बनाकर बच्चों को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाएं

दया, धर्म का मूल

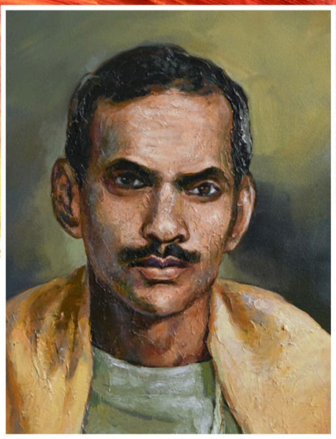

- पण्डित श्रीराम शर्मा आचार्य

दया एक दैवी गुण है जिस पर सभी धर्मों की रूपरेखा स्थिर है। दया के बिना कोई धर्म, धर्म नहीं रहता, परम भक्त तुलसीदास जी ने इसी तथ्य को व्यक्त करते हुए लिखा है-

दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान ।
तुलसी दया न छोड़िए जब लगि घट में प्रान ॥

वस्तुतः दया ही अपने आप में सबसे बड़ा धर्म है जिसका आचरण करने से मनुष्य का आत्म विकास होता है। समस्त हिंसा, द्वेष, वैर विरोध की भीषण लपटें दया का संस्पर्श पाकर शाँत हो जाती हैं। दया परमात्मा का निजी गुण है। इसीलिए भक्त, संतजन भगवान को दयासिन्धु कहते हैं। परमात्मा का यह दिव्य गुण जब सज्जनों के माध्यम से धरती पर अमृत बनकर बरसता है तो इससे सभी का भला होता है। लोक विजेताओं से भी बड़ा है दया का राजमुकुट, और इसकी शक्ति जिससे हिंसक भी अहिंसक, दुश्मन भी मित्र बन जाते हैं, अपार है।

दया एक दैवी गुण है। इसका आचरण करके मनुष्य देवत्व प्राप्त कर सकता है। दयालु हृदय में परमात्मा का प्रकाश ही प्रस्फुटित हो उठता है। क्योंकि भगवान स्वयं दयास्वरूप है। दयालु हृदय में ही उसका निवास होता है। दया के आचरण से मनुष्य में अन्य दैवी गुण स्वतः ही पैदा होने लगते हैं। महर्षि व्यास ने लिखा है 'सर्वप्राणियों के प्रति दया का भाव रखना ईश्वर तक पहुँचने का सबसे सरल मार्ग है।' महात्मा गाँधी ने कहा था 'दया और सत्य का अन्योन्याश्रित संबंध है। जहाँ दया नहीं वहाँ सत्य नहीं। ' विदेशी विचारक होम ने लिखा है जो दूसरों पर दया नहीं करता उसे परमात्मा की प्राप्ति नहीं होती।

दया अपने आप में प्रसन्नता, प्रफुल्लता का मधुर झरना है। जिस हृदय में दया निरन्तर निर्झरित होती रहती है वहीं स्वयं ही आह्लाद, आनन्द के मधुर स्वर निनादित होते रहते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि दयालु व्यक्ति सहज आत्मसुख से सराबोर रहता है।

दया की शक्ति अपार है । सेना और शस्त्रबल से तो किसी राज्य पर अस्थायी विजय मिलती है । किन्तु दया से स्थायी और अलौकिक विजय मिलती है। दयालु व्यक्ति मनुष्यों को ही नहीं अन्य प्राणियों को भी जीत लेता है । सर्व हितचिन्तक दयालु व्यक्ति से सभी प्राणियों का भय, अहित की आशंका दूर हो जाती है। उसके सान्निध्य में सभी प्राणी अपने आपको सुरक्षित और निश्चिन्त समझते हैं। ऋषि आश्रमों के उपाख्यानों से मालूम होता है कि वहाँ सभी प्राणी निर्भय होकर विचरण करते थे। ऋषियों के बालक उनके साथ खेलते थे। इतना ही नहीं हिंसक पशु भी अपनी हिंसा भूलकर अन्य अहिंसक पशुओं के साथ विचरण करते थे। ऐसी है दया की शक्ति। दयालु ऋषियों के निवास से आश्रमों का वातावरण हिंसा, क्रूरता, अन्याय, द्वेष आदि से पूर्णतः मुक्त होता था।

दया से दूसरों का विश्वास जीता जाता है। यह प्राणियों के हृदय पर प्रभाव डालती है । दया समाज में परस्पर की सुरक्षा और सौहार्द की गारंटी है, क्योंकि इसमें दूसरों के भले की भावना निहित होती है। जिस समाज में लोग एक दूसरे के प्रति दयालु होते हैं, परस्पर सहृदय और सहायक बनकर काम करते हैं वहाँ किसी तरह के विग्रह की संभावना नहीं रहती। विग्रह, अशान्ति, क्लेश वहीं निवास करते हैं जहाँ व्यवहार में क्रूरता है। क्रूरता अपना अन्त स्वयं ही कर लेती है। इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप विभिन्न

उपद्रव उठ खड़े होते हैं। दया से स्नेह, आत्मीयता आदि कोमल भावों का विकास होता है। दयालुता ही तो समाज को एकाकार करती है।

दया सुधार का एक शक्तिशाली माध्यम है अपराधी भी मनुष्य ही होता है और उसके हृदय में भी दया बीजरूप से निवास करती है। किन्हीं कारणों अथवा अज्ञानतावश मनुष्य अपराधी जीवन का अवलम्बन लेता है, खासतौर से ऐसे अपराधी लोगों का जीवन किसी के सहयोग प्रेम, सहानुभूति, आत्मीयता से रहित होता है। शायद इसीलिए ये लोग कठोर, क्रूरकर्मी बन जाते हों। कुछ भी हो किन्तु बाद में भी इन्हें किसी दयालु हृदय की आत्मीयता और सद्भावनायें मिल जायें तो ये पुनः मनुष्य बन जायें, इनमें मानवीय गुणों का विकास हो जाय। पुण्यात्मा, ऋषियों, सन्तों, महापुरुषों के संपर्क में आकर अनेक क्रूरकर्मी, कठोर हृदय व्यक्ति भी सुधर जाते हैं। वस्तुतः दया हमारे स्वभाव, संस्कृति, सभ्यता का मूलाधार है। दया, आत्मा का विशिष्ट गुण है। दया के आचरण के लिये किन्हीं बाह्य साधनों की आवश्यकता नहीं होती पर दुःख कातरता, सम्वेदना, आत्म-त्याग और सहिष्णुता पर दया का विकास होता है। दूसरों के दुख, कष्ट, मुसीबतों को समझकर उन्हें सुखी बनाने, गिरे हुओं को उठाने की तीव्र भावना का उदय होना, इसके लिये अपने हित-अहित का ध्यान न रखकर प्राण-प्रण से जुट जाना, इसमें आने वाले कष्टों को सहर्ष सहन कर लेना दया-धर्म के आधार हैं। खुद दुःख सहकर भी दूसरों को सुखी बनाना, खुद जलकर भी दूसरों को प्रकाश देना, खुद मिटकर भी दूसरों को सुखी बनाना, परहित साधन में स्वयं को भूल जाना दयाधर्म का सर्वोत्कृष्ट आदर्श हैं।

दया का दान सबसे महान दान है। भौतिक वस्तुओं के दान से किसी की सामयिक सहायता की जा सकती है। कुछ समय के लिए किसी बाह्य अभाव की पूर्ति की जा सकती है किन्तु दया का दान पाकर, अपने दुःख का अभिन्न साथी, सहयोगी, मित्र पाकर मनुष्य में जो संतोष प्रसन्नता, उत्साह, आशा, उमंगें आदि भाव पैदा होते हैं इनसे मनुष्य बड़े-से-बड़े कष्ट, अभावों, मुसीबतों में भी सरलता से जीवन पथ पर आगे बढ़ता रहता है। वस्तुतः दया का दान लड़खड़ाते पैरों में नई शक्ति देना, निराश हृदय में जागृति की नई प्रेरणा फेंकना, गिरे हुए को उठने की सामर्थ्य प्रदान करना, अन्धकार से भटके हुए को प्रकाश देना है।

इसलिए शास्त्र कहता है- दयालु बनिए ? अपने हृदय में परमात्मा के इस महान गुण का विकास कीजिए। आपकी दया की आवश्यकता है उन करोड़ों लोगों को जो दुःख, कठिनाई, मुसीबतों में उलझे कराह रहे हैं, जो गिरे हुए हैं, जिनके पग लड़खड़ा रहे हैं, आगे बढ़ने में, जिनका कोई सहारा नहीं है धरती पर। प्रतिदिन हमारे में से प्रत्येक के सामने ऐसे क्षण आते ही रहते हैं जब दूसरों को हमारी आवश्यकता होती है। यदि हममें से प्रत्येक नियमित रूप से दया-धर्म का आचरण करे तो मानव समाज के अनेकों कष्ट सहज ही समाप्त हो जाएं। सामूहिक प्रगति एवं शालीनता का सर्वत्र विकास होने लगे।

जैसे हम परमात्मा से दया की प्रार्थना करते हैं उसी तरह हमारा कर्त्तव्य है कि हम भी दूसरों पर दया करें तो भगवान भी हम पर दया करेगा एवं आये दिन होने वाले अनेकों अपराधों को क्षमा करेगा।

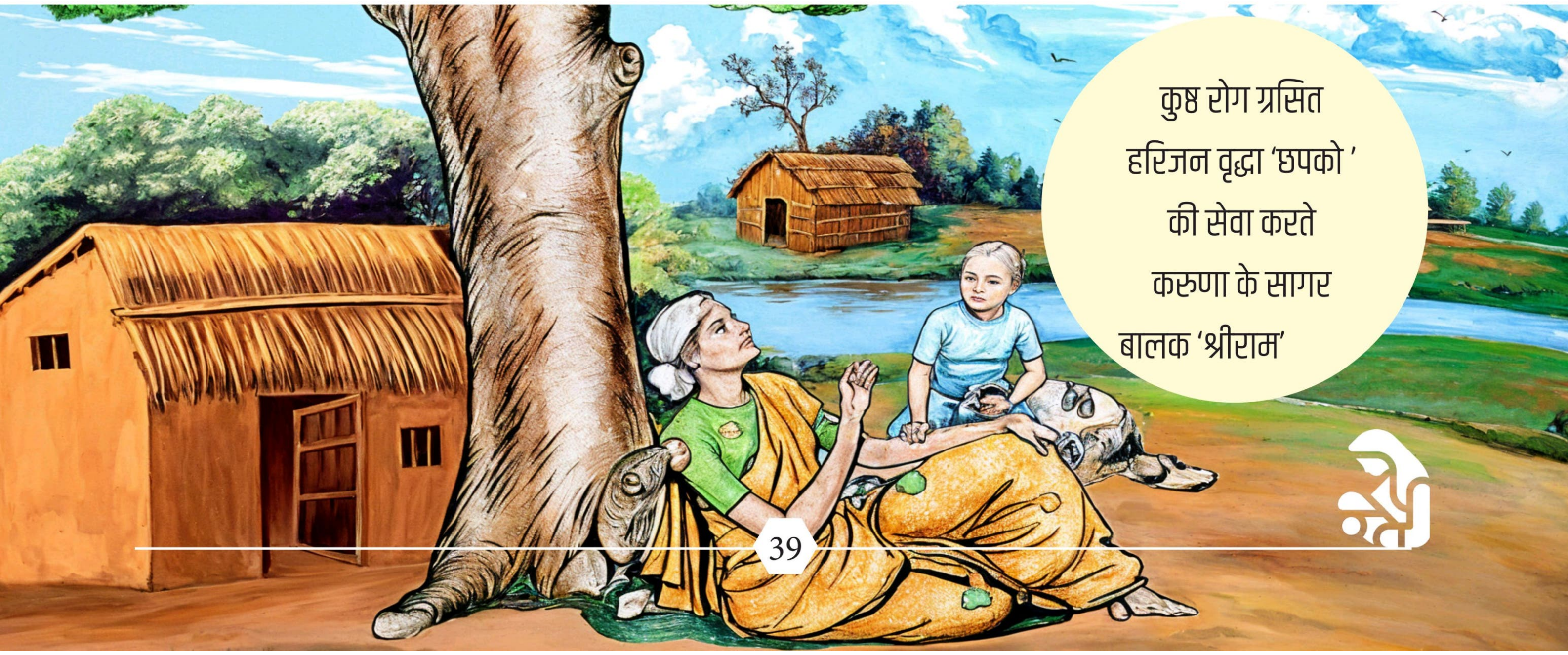

कुष्ठ रोग ग्रसित हरिजन वृद्धा 'छपको' की सेवा करते करुणा के सागर बालक 'श्रीराम'

कहानी
प्रथम दिवस

नकिर्देवा मिनीमसि नकिरा योपयामसि मन्त्रश्रुत्यं चरामसि । पक्षेभिरपिकक्षेभिरत्राभि सं रभामहे ॥

- ऋ. १०/१३४/७

हिंसा तथा फूट मनुष्य की अवनति के कारण हैं । इसलिये मनुष्य को चाहिए प्रत्येक छोटे-से छोटे कार्य में भी एक-दूसरे को सहायता दिया करें ।

पहेली ?

सरिता की 5 लड़कियाँ हैं और उन सभी लड़कियों का एक-एक भाई है । सरिता की कुल कितनी संतानें हैं ?

दया का फल

नीलकंठ नाम का एक लकड़हारा था । वह बड़ी मेहनत से लकड़ियाँ काटकर लाता । उन्हें बेचकर अपना और अपनी पत्नी का पेट पालता था । एक दिन वह लकड़ियाँ काटकर घर लौटने वाला था, तभी उसकी नजर रंग-बिरंगी मैना चिड़िया पर पड़ी । नीलकंठ ने देखा मैना के शरीर पर कई छोटे-छोटे घाव थे । वह घायल पड़ी थी शायद किसी बड़े पक्षी ने उसे मारने की कोशिश की थी ।

नीलकंठ को मैना की हालत पर तरस आ गया । उसने पत्तों का दोना बनाकर झरने से मैना को पानी पिलाया । मैना को होश आ गया, वह उसके घावों को साफ करने लगा । मैना शांत थी, तभी बादल घिर आए । नीलकंठ सिर पर लकड़ियों का गट्ठर रखकर घर लौटने लगा । घायल मैना को उसने कंधे पर बैठा लिया ।

घर पर नीलकंठ की पत्नी ने मैना की खूब सेवा की । जब वह उड़ने लायक हो गई तो नीलकंठ उसे जंगल में छोड़ आया, लेकिन मैना फिर नीलकंठ के घर लौट आई । नीलकंठ ने कुत्ते-बिल्लियों से उसकी रक्षा के लिए लकड़ी का एक पिंजड़ा बना दिया । अब मैना वहीं आराम से रहने लगी । दिन में वह घूमती, रात को अपने पिंजड़े में आराम करती ।

एक दिन शाम को जब मैना लौटी, तो उसकी चोंच में एक मोती दबा था । उसने वह मोती लाकर नीलकंठ के हाथों में रख दिया ।नीलकंठ मोती के बारे में कुछ नहीं जानता था । उसने अपने दोस्त गंगुआ को मोती दिखाया, तो वह चौक पड़ा । गंगुआ बड़ा मक्कार आदमी था । उसने बड़े सस्ते में वह मोती नीलकंठ से खरीद लिया ।

नीलकंठ ने मोती की बिक्री से प्राप्त धन से मैना के लिए अच्छे किस्म के चावल खरीदे ।

दिन गुजरते रहे । मैना तीन-चार दिन में एक बार मोती जरूर ले आती ।गंगुआ वह मोती बड़े सस्ते में खरीद लेता । नीलकंठ ने मैना द्वारा मोती लाने की बात गंगुआ से अब तक गुप्त रखी थी ।उसने गंगुआ से कहा था – मैं ये मोती समुद्र में से लाता हूँ ।

एक दिन नीलकंठ की पत्नी ने गंगुआ की पत्नी से मैना द्वारा मोती लाने की बात कह दी ।

सुनकर गंगुआ की नींद हराम हो गई।गंगुआ सुबह ही सुबह नीलकंठ के पास गया और बोला – नीलकंठ तुम मैना को बेचोगे ? नहीं मित्र ! मैं ऐसा नहीं करुंगा। देख लो, मैं मैना को एक हजार रूपए में खरीद सकता हूँ। मगर मैं तो किसी भी कीमत पर मैना को बेच ही नहीं सकता, मैना मुझे अब तो औलाद के समान प्रिय है। देख लो, एक हजार रूपए कम नहीं है नीलकंठ।

नीलकंठ ने कहा – मित्र, मैं मैना को नहीं बेच सकता।

गंगुआ अपना सा मुंह लेकर लौट गया, किन्तु वह शांत बैठने वाला नहीं था।

उसी रात उसने मैना को चोरी करने का निश्चय किया। इसी इरादे से वह नीलकंठ के घर में घुसा। नीलकंठ की नींद खुल गई। वह पिंजरा लेकर भागते हुए गंगुआ के पीछे दौड़ा और उसकी टांग पकड़कर गिरा दिया।इसी आपा-धापी में मैना का पिंजरा खुल गया। उसने अपनी चोंच के प्रहार से गंगुआ का चेहरा लहूलुहान कर दिया। गंगुआ जैसे-तैसे अपनी जान बचाकर भागा।

अगली सुबह जब नीलकंठ जंगल में जाने की तैयारी कर रहा था, तभी राज्य के राज्यपाल तोमर के नौकर उसके घर आ धमके। वे उसे गंगुआ की हत्या के प्रयास के आरोप में पकड़ने आए थे।

नीलकंठ को गंगुआ पर बड़ा क्रोध आया। वह मैना की चोरी सफल न होने पर हत्या जैसा बड़ा इल्जाम उस पर लगा बैठा था।

नीलकंठ ने राज्यपाल के सामने अपनी लाख सफाई दी, लेकिन वह न माना, उसने नीलकंठ को फांसी की सजा सुना दी।

अगले दिन नीलकंठ को फांसी पर चढ़ाया जाने वाला था। वह रात के समय काल कोठरी में बैठा अपने भाग्य को रो रहा था।तभी पंखों की फड़फड़ाहट से उसका ध्यान टूटा, उसने देखा वह मैना थी।

नीलकंठ मैना को देखते ही अपना दुख भूल गया। मैना नीलकंठ के पास आई। उसके हाथ पर तीन-चार मोती रख दिये। तभी कारागार का चौकीदार वहां आया, जब उसने नीलकंठ के पास मोती देखा, तो उसे लालच आ गया।उसने नीलकंठ से मोती मांगे, परन्तु नीलकंठ ने साफ इंकार कर दिया। चौकीदार ने उसके मोती छीननेके लिए कोठरी का ताला खोला और अन्दर घुस आया। नीलकंठ यही चाहता था, उसने चौकीदार को नीचे पटक दिया। उसका मुंह बंद कर हाथ-पैर बांध दिये, फिर कोठरी से भाग गया।

अंधेरे में वह अपने घर की ओर भागता जा रहा था। मैना बोल-बोलकर रास्ता बताती, उसके साथ उड़ रही थी। घर पर नीलकंठ की पत्नी रो रही थी। नीलकंठ को वापस आया देख वह खुश हो गयी। नीलकंठ ने जल्दी-जल्दी जरूरी सामान एक पोटली में बांधा और शहर छोड़कर भाग चला।

मैना अब भी रास्ता बताती चल रही थी। दिन उगने से पहले वह शहर की सीमा से बाहर निकल आए थे। भूख-प्यास के मारे पति-पत्नी का बुरा हाल था। मैना उनकी परेशानी समझ गयी थी। वह उन्हें एक नदी के किनारे ले गयी। पानी पीने के बाद नीलकंठ ने नदी पर गौर किया तो वह चकित रह गया। रेत चमकीली थी। उसमें छोटे-छोटे स्वर्ण कण मिले हुए थे।

नीलकंठ ने एक कपड़ा बिछाकर मैना को कुछ इशारा किया। मैना समझ गई। वह अपनी चोंच से रेत से सोने के कण निकालकर कपड़े पर रखने लगी। जब ढेर सारे स्वर्ण कण एकत्र हो गये, तो तीनों आगे बढ़ चले।

आगे एक शहर था। वहां नीलकंठ ने स्वर्ण कण बेच दिये। उनसे काफी धन मिला। इसी धन से नीलकंठ ने अपना व्यापार शुरू किया। अब वह अपनी पत्नी तथा प्यारी चिड़िया ' मैना ' के साथ बहुत सुख से रहने लगा। एक दिन नीलकंठ की पत्नी ने कहा – स्वामी, उस दिन अगर आप मैना पर दया न करते, तो हमें कभी यह दिन देखने को नसीब न होता।

हाँ, तुम सच कहती हो। दया का फल किसी न किसी रूप में अवश्य मिलता है।

पहेली का उत्तर – 6

कहानी
द्वितीय दिवस

पशून् पाहि, गां मा हिं सीः; अजां मा हिं सीः । आव मा हिं सीः; इमं मा हिं सीः; छिपादंपशूम् ।।

- यजु. १३/४७-४८

पशुओं की रक्षा करो । गाय और बकरी को मत मारो । भेड़ को मत मारो । दो पैर वाले मनुष्य तथा पक्षी को मत मारो । घोड़े को, गधे और पशुओं को मत करो । हिंसा करना महान अधर्म है ।

पहेली ?

एक किलो रुई तथा एक किलो लोहे मे क्या ज्यादा भारी होगा ?

बालक नानक की दयालुता

दरवाजे पर एक भिखारिन खड़ी थी। दरवाजा खोलकर एक बारह वर्ष का बालक बाहर आया और बोला-'क्या बात है माई ?'

भिखारिन ने उत्तर दिया- 'बेटा दो दिन से भूखी हूँ।'

भूख तो उसे भी लगी थी, पर भिखारिन की भूख सुनकर वह विचलित हो गया। बालक ने उसे अन्दर बुलाया. उसे आदरपूर्वक बिठाया। अंदर माँ ने जो थाली उसके लिए परोसी थी, वह उसे उठा लाया। उसने उस थाली को भिखारिन के सामने रख दिया। माँ एक-एक कर रोटी देती जाती थी और वह भिखारिन की थाली में रखता जाता था। माँ समझती थी कि रोटी नानक ही खा रहा है। जब भिखारिन का पेट भर गया तो वह नानक को आशीष देकर चली गई. नानक उस थाली को उठाकर रसोई में ले गया ।

थाली लौटाते हुए वह माँ से बोला- 'मां, बस कर, मेरा पेट भर गया है। आज खाना बड़ा स्वादिष्ट बना था। मुझे ऐसा लग रहा था, मानो मैं दो दिन से भूखा था।'

माँ ने मुस्कराकर कहा-

'और ले लो बेटा, भगवान ने बहुत दिया है हमें।'

बालक ने भगवान का नाम सुना तो उसे संतोष हुआ। वह बोला-'भगवान सबको देता है ?'

माँ ने कहा-'हां बेटा, उसके राज्य में कोई जीव भूखा नहीं रहता।'

नानक ने माँ को भिखारिन के दो दिन भूखे रहने की बात नहीं बताई।

आज उसने कुछ नहीं खाया. माँ से आज्ञा लेकर वह अपने पिता के खेतों और बागों में घूमने निकल पड़ा। वह मन-ही-मन सोचता जा रहा था-'ये सब खेत व बाग मेरे पिता को भगवान ने दिए हैं। ये सब तो भगवान के ही हैं। इसलिए इन खेतों का अन्न भी भगवान का है।' नानक ने देखा कुछ चिड़िया खेत में बिखरे दाने खा रही हैं। उसने उन्हें मारा नहीं। वह

मुस्कुरा दिया। उसके मुंह से निकल पड़ा-

“रामजी की चिड़िया, रामजी का खेत,
खाओ री चिड़िया, भर-भर पेट।”

यह गीत गुनगुनाता हुआ नानक शाम को घर लौटा। रात को उसे बहुत कम नींद आई । वह चिड़ियों और भिखारिन के बारे में सोचता रहा । अब तो वह भिखारियों, बीमारों और जीवों की खोज करता , और उनके दुखों को दूर करने के लिए कार्य करता उसका मन और कहीं न लगता। वह जहां भी जाता, वहीं लोगों के दुखों को देखता और उन्हें दूर करने का चेष्टा भी करता। कभी-कभी तो उसकी आँखों में आँसू भी आ जाते। वह रो पड़ता।

एक दिन नानक के पिता ने नानक को चालीस रुपए दिए और नानक से कहा-‘नानक ! बेटा अब तुम बड़े हो गए हो। तुम्हें कुछ काम-धंधा करना चाहिए। ये लो चालीस रुपए और बाजार में जाकर खरा सौदा करो।’

नानक चालीस रुपए लेकर चल दिया। बाजार पहुंचने से पहले ही नानक को साधुओं की एक टोली मिली, जो दो दिनों से भूखी थी। नानक ने चालीस रुपए का भोजन उस टोली को खिला दिया। नानक खुश होकर अपने घर लौट आया। पिताजी को पूरी घटना सुनाकर नानक ने पिता से कहा- “पिताजी, आज मैंने खरा सौदा किया है।’

हृदय में दया का भाव रखने वाले बालक के लिए इससे बड़ा खरा सौदा और क्या हो सकता था। नानक का मन एक संत का मन था। उसका मन व्यापारी का मन नहीं था। दया रखने वाले बालक ही बड़े होकर महान बनते हैं।

पहेली का उत्तर – दोनों बराबर होंगे

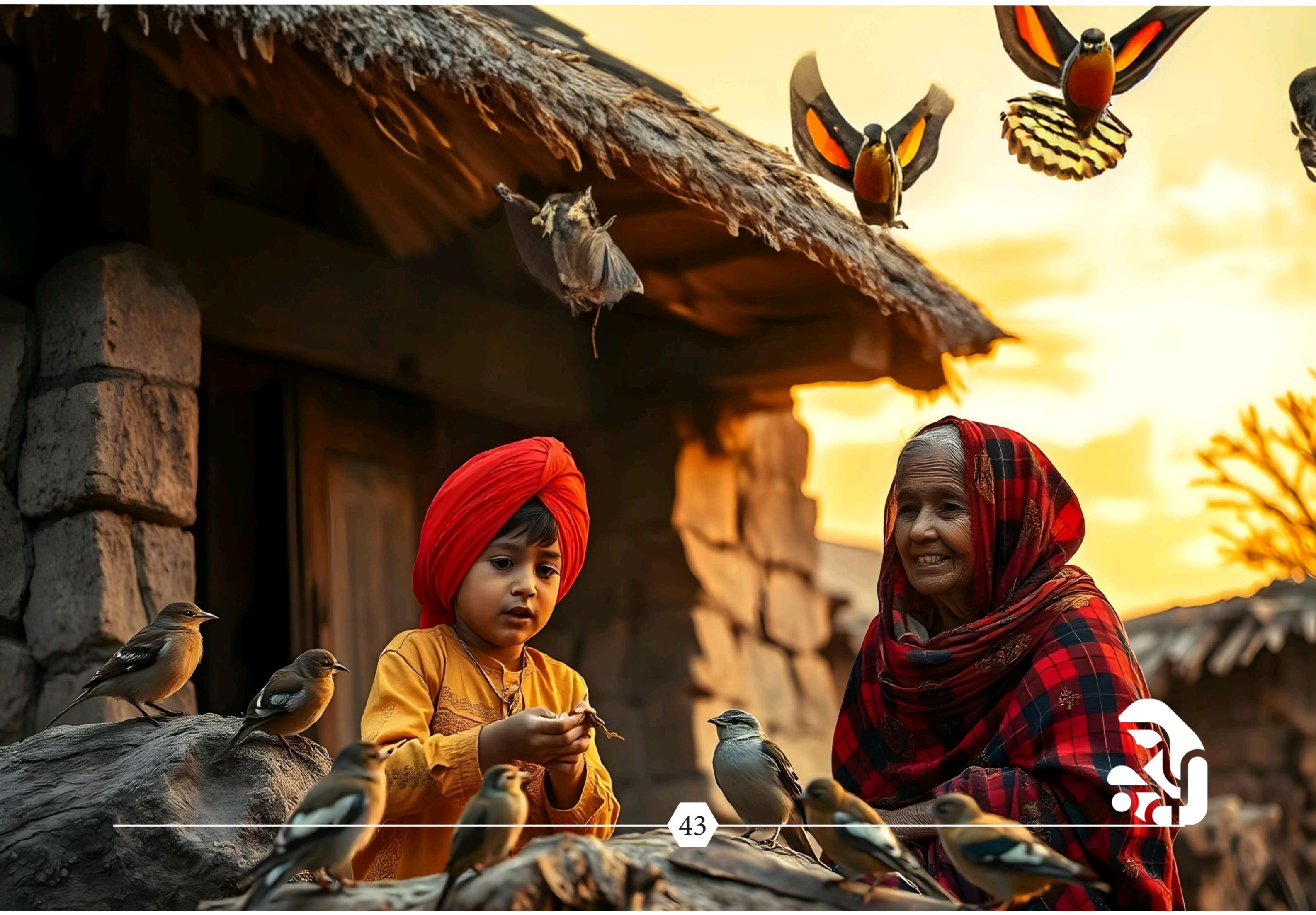

कहानी
तृतीय दिवस

यन्नूनमश्यामं गतिं मित्रस्य यायां पथा । अस्य प्रियस्य शर्मण्यहिंसानस्य सश्चिरे ।।

- ऋ. ५।६४।३

*हम मित्र के द्वारा दिखाये गये मार्ग का अनुसरण करें । हमारा मित्र अहिंसक हो ।
उससे हम कल्याण प्राप्त करें ।*

पहेली ?
वह क्या चीज है, जो हम दिन में कई बार उठाते हैं और कई बार रखते हैं ?

रन्तिदेव की उदारता

जब वे भोजन करने बैठे तो एक भूखा किसान भोजन की तलाश में आया। रन्तिदेव ने उन्हें बैठने की पेशकश की, उन्हें आराम दिया और उन्हें भोजन परोसा । किसान ने भोजन किया और संतुष्ट हुआ।

अभी भी कुछ खाना बाकी था। रन्तिदेव के परिवार ने जो कुछ बचा था उसे बांटने का फैसला किया। जब वे भोजन करने बैठे, तो द्वार पर एक यात्री आया। उसके साथ चार कुत्ते भी थे। उसने अपने और अपने चार कुत्तों के लिए भोजन की भीख माँगी।रन्तिदेव ने जो कुछ बचा था उसे अतिथि को अर्पित कर दिया। भूखे कुत्तों को बर्तन साफ करते देखकर वह बहुत खुश हुआ। जब उस आदमी ने विदा ली तब तक खाना नहीं बचा था।

रन्तिदेव मुस्कुराए, "भगवान दयालु हैं, हमारे पास थोड़ा पानी बचा है। तभी उसे किसी के रोने की आवाज सुनाई दी, अरे साहब ! मैं प्यास से मर रहा हूँ। क्या कोई दयालु मुझे थोड़ा पानी देगा ? "

रन्तिदेव दौड़कर बाहर गली में गए और देखा कि एक गरीब व्यक्ति प्यास से व्याकुल है। उसने प्यासे को पानी पिलाया। आदमी ने पानी नीचे गिरा दिया।जैसे ही रन्तिदेव ने उसे देखा, गरीब आदमी ने खुद को सृष्टि के भगवान ब्रह्मा के रूप में प्रकट किया।

" रन्तिदेव, देवता आपकी परीक्षा लेने के लिए पृथ्वी पर अवतरित हुए। वे ही विभिन्न रूपों में आपके समक्ष आये थे। हम आपके त्याग की भावना से प्रसन्न हैं। आप जो भी वरदान मांगेंगे, उसे देने में हमें खुशी होगी।"

रन्तिदेव ने भगवान ब्रह्मा को प्रणाम किया और धीरे से कहा, " मेरे पास जो कुछ भी है उसे मैं हमेशा जरूरतमंदों के साथ साझा करता रह सकूँ, यही आशीर्वाद दें। "

भगवान ब्रह्मा ने रन्तिदेव को आशीर्वाद दिया और उनका धन वापस कर दिया। रन्तिदेव और उनका परिवार फिर कभी भूखा नहीं रहा और जरूरतमंदों की मदद करता रहा।

पहेली का उतार – कदम

कहानी
चतुर्थ दिवस

शेरभक शेरभ पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेति किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वः प्राहैत् तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥ **- अथर्व. २। २४ । १**

ओ नृशंस ! हिंसक !! हत्यारे !!! तुम्हारे अनुयायी हमसे सदैव दूर रहें । तुम्हारे अस्त्र तुम्हें ही पीड़ित करें । तुम अपने ही सम्बन्धियों, प्रोत्साहन देने वालों को खाओ, अपना ही मांस भक्षण करो ।

पहेली ?
हाँथ आए तो 100 को काट दे, थक जाए तो पत्थर चाटे । बताओ क्या है ?

धर्म पर आस्था रखने वाले दया न छोड़ें

नावेल्ड (अलवानिया) का एक छोटा देहाती गाँव है, जहाँ अधिकांश कृषक रहते हैं। वहाँ की परंपरा और स्थिति ऐसी है, जिससे वहाँ अधिकांश व्यक्ति मांसाहार को स्वाभाविक भोजन मानते और प्रयोग करते हैं।

ऐसे ही एक कृषक परिवार का छोटा बालक न्यूनररिचे पास के मिशन स्कूल में भर्ती हुआ। स्कूल में सामान्य शिक्षा के अतिरिक्त एक घंटा धर्म की शिक्षा भी होती थी। ढर्रा मुद्दतों से चल रहा था। पादरी बाइबिल पढ़ाते और लड़के उसे पढ़ते। ऊँचे आदर्शों की चर्चा होती, ईसाई धर्म का गौरव बताया जाता, पर था वह सब धर्म-शिक्षण-जानकारी की आवश्यकता पूरी करने तक ही सीमित।

एक दिन पादरी प्रभु यीशु की सहृदयता और शिक्षा की विवेचना कर रहे थे। वे बता रहे थे- "यीशु ने दया और करुणा की सरिता बहाई और अपने अनुयायियों को हर प्राणी के साथ दया का सहृदय व्यवहार करने का उपदेश दिया। सच्चे ईसाई को ऐसा ही दयावान् होना चाहिए।"

यह सब एक लकीर पीटने के लिये पढ़ा- पढ़ाया था। पर बालक रिचे ने उसे गंभीर रूप में लिया। वह कई दिन तक लगातार यही सोचता रहा-क्या हम सच्चे ईसाई नहीं हैं ? क्या हम प्रभु यीशु के उपदेशों को कहते-सुनते भर ही हैं ? उन्हें अपनाते क्यों नहीं ? उन पर चलते क्यों नहीं ?

बालक ने कई दिन तक अपने घर में मांस के लिये छोटे जानवरों और पक्षियों का वध होते देखा था। उनके कष्ट और उत्पीड़न को देखकर उसकी आँखों में अश्रु भर आते थे। कोमल भावना वाले बालक ने एक दिन इस दृश्य को देखकर तड़पते हुये प्राणी के साथ अपनी आत्मीयता जोड़ी तो उसे लगा जैसे उसी को काटा उधेड़ा जा रहा है। बेचारा घर से बाहर चला गया और सुबक सुबक कर घंटों रोता रहा।

तब वह इतना छोटा था कि अपने मनोभाव घर के लोगों पर ठीक तरह प्रकट नहीं कर सकता था, पर आज वह बड़ा हो चला था, लगभग दस साल का। अपने को प्रकट करने

लायक शब्द उसके पास आ गये थे, अपनी वेदना उसने दूसरे दिन शिक्षक पादरी के सामने रखी और पूछा, क्या मांस के लिए पशु-पक्षियों की हत्या करना ईसाई धर्म और प्रभु यीशु की शिक्षाओं के अनुरूप है ?

पादरी स्वयं मांस खाते थे। वहाँ घर-घर में मांस खाया जाता था। इसलिये स्पष्ट न कह सके। अगर-मगर के साथ दया और मांसाहार के प्रतिपादन के समर्थन की बात कहने लगे। आत्म्य - शिक्षित बालक के गले सुशिक्षित पादरी की लंबी-चौड़ी व्याख्या तनिक भी न उतरी। उसे लगा, वह बहकाया जा रहा है। यदि दया, धर्म का अंग है, तो उसे धर्मात्मा लोग हर प्राणी के लिए प्रयोग क्यों न करें ? यदि धर्म वास्तविक है तो उसे व्यवहार में क्यों न उतारा जाए ?

बालक रिचे ने निश्चय किया कि वह सच्चा ईसाई बनेगा, प्रभु यीशु का सच्चा अनुयायी। उसने मांस न खाने का निश्चय कर लिया। सामने भोजन आया तो उसने मांस की कटोरी दूर हटा दी। कारण पूछा गया तो उसने यह कहा - "यदि हम धर्म पर आस्था रखते हैं तो हमें उसकी शिक्षाओं को व्यवहार में भी लाना चाहिए। हत्यारे और रक्त-पिपासु लोग धर्मात्मा नहीं हो सकते।"

घर के लोगों ने मांस न खाने से शरीर कमजोर हो जाने की दलील दी तो उसने पूछा- क्या शारीरिक कमजोरी आत्मिक पतन से अधिक मायने रखती है ? घर वालों का समझाना-बुझाना बेकार चला गया, रिचे ने मांस खाना छोड़ा, सो छोड़ ही दिया। ईसाई धर्म और यीशु की दया, शिक्षा का प्रसंग जहाँ भी चलता, तब रिचे रूखे कंठ और डबडबाई आँखों से यही पूछता क्या पेट को बूचड़खाना बनाए रखने वालों को धर्म और परमेश्वर की चर्चा करने का अधिकार है ? लोगों के तर्क कुंठित हो जाते और सच्चाई के आगे सिर नीचा हो जाता।

बालक रिचे जब भी मांस की प्राप्ति के लिए होने वाले उत्पीड़न पर विचार करता, तभी उसकी आत्मा रो पड़ती, इस मनोदशा से उसकी माँ प्रभावित हुई, फिर दोनों बड़ी बहिन। तीनों ने मांस छोड़ा। भावनाओं का मोड़ अशुभ या शुभ की दिशा में जिधर भी मुड़ चले उधर बढ़ता ही जाता है। इस प्रकार सारे परिवार ने मांस खाना छोड़ दिया। यह हवा आगे बढ़ी। पड़ोस और परिचय क्षेत्र में यह विचार जड़ जमाने लगा कि सच्चे धर्मात्मा को दयालु होना चाहिए। जो दयालु होगा वह मांसाहार कर कैसे कर सकेगा ? रिचे बड़े होकर पादरी बने। उन्होंने घर घर घूमकर सच्ची धार्मिकता का प्रचार किया और मांसाहार छोड़ने के लिए प्रेरित किया। 'श्रद्धालु धर्म-प्रेमियों की संस्था' नामक संगठन ने अलवानिया में अनेकों धर्म प्रचारकों तथा प्रचार सामग्री के माध्यम से जो लोक-शिक्षण किया, उससे प्रभावित होकर लाखों व्यक्तियों ने मांसाहार छोड़ा और धार्मिकता अपनाई। रिचे के सत्प्रयत्नों को धार्मिक क्षेत्रों में सराहा जाता रहा है।

पहेली का उत्तर – चाकू

मनुष्यता को निर्दयता से कलंकित न करें

परमात्मा ने मनुष्य को जो भी बल, बुद्धि एवं विवेक दिया है, उसके हृदय में दया, करुणा, सहृदयता, सहानुभूति अथवा संवेदना की भावनायें भरी हैं, वे इसलिये नहीं कि वह उन्हें अपने अन्दर ही बन्द रखकर व्यर्थ चला जाने दे। उसने जो भी गुण और विशेषता मनुष्यों को दी हैं वह इसीलिए कि वह उनका उपयोग संसार की सेवा करने, उसे लाभ पहुंचाने में करे। जो मनुष्य ऐसा नहीं करता वह ईश्वर के मन्तव्य के विरुद्ध आचरण करता और उन गुणों के लिये अपने को अयोग्य सिद्ध करता है। करुणा, दया, क्षमा आदि के अपने गुण ईश्वर मनुष्यों के माध्यम से ही प्रकट करता है ।

अन्याय एवं अत्याचार करना अथवा उसे सहना तो पाप है ही, दूसरे निर्दोष प्राणियों पर अत्याचार होते देख कर उसका प्रतिकार न करना, चुपचाप उसे देखते रहना अथवा उसकी उपेक्षा कर देना भी एक पाप है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने सामने अथवा अपनी जान में किसी निर्दोष प्राणी पर अत्याचार देख-सुनकर, सामर्थ्य भर उसका विरोध एवं प्रतिकार अवश्य करे। अन्याय अथवा अत्याचार को देख-सुनकर चुपचाप रह जाना, उसका प्रतिकार अथवा विरोध न करने वाला अत्याचारी की तरह ही पाप का भागी बनता है । क्योंकि निर्बल अथवा निर्दोष पर होने वाले अत्याचार को देखकर उसकी उपेक्षा कर देना, मौन रह जाने का अर्थ है उस कुकृत्य का समर्थन करना। मौन स्वीकृति का लक्षण माना गया है। अन्याय अथवा अत्याचार का सामर्थ्य भर विरोध करना प्रत्येक विवेक एवं धर्मवान व्यक्ति का अनिवार्य कर्तव्य है।

आज दिन-दिन संसार में अन्याय एवं अत्याचार की वृद्धि होती जा रही है। इसका कारण यही है कि लोग प्रमादवश उसका विरोध नहीं करते, जिससे कि वह सभी दिशाओं में अबाध गति से बढ़ता चला जा रहा है। निरीह, निर्बल एवं निर्दोषी पशुओं पर भी मनुष्यों का अत्याचार अपनी पराकाष्ठा को पार कर गया है। आज संसार में प्रतिदिन हजारों-लाखों निर्दोष पशु-पक्षियों का संहार किया जाता है। कहीं भोजन के लिए, कहीं उनके अस्थि-पिंजर का उपयोग करने के लिये तो कहीं देवी-देवताओं के नाम पर बलि के रूप में । इतना ही नहीं, मनोरंजन, शिकार खेलने तथा निशाना साधने के लिये भी न जाने कितने पशु-पक्षियों की अकारण हत्या की जा रही है। आज के बुद्धिमानी युग में जबकि मनुष्य अपनी वन्यावस्था से बहुत आगे आ गया है इस प्रकार पशु-पक्षियों का हत्याकाँड बड़ी लज्जा की बात है।

एक ओर जहाँ मनुष्य ईश्वर, जीव, प्रकृति, पुरुष, जड़-चेतना, आत्मा, धर्म, ज्ञान-विज्ञान की बात करता है वहाँ दूसरी ओर निर्बल, निरीह एवं निर्दोष प्राणियों की गर्दन काट रहा है। एक ओर जहाँ मनुष्य अपने को परमात्मा का अंश मानता है और अपने को दयालु, क्षमा-शील, करुणा एवं पर दुःख कातर होने का दावा कर रहा है, अपने को धर्म ज्ञाता, अहिंसक तथा सहानुभूति-सम्पन्न बतला रहा है वहाँ दूसरी ओर पशुओं को मारकर खा रहा है, उनकी खाल खींच रहा है और देवताओं के नाम पर उनके प्राण ले रहा है। क्या मनुष्य का यह कुत्सित कर्म उसे इस दावे से नीचे नहीं गिरा देता कि वह सृष्टि का सबसे श्रेष्ठ एवं धर्मशील प्राणी है। निश्चय ही उसके द्वारा पशु-पक्षियों पर

होने वाले अत्याचारों को देख कर यही कहना पड़ता है कि मनुष्य का यह दावा झूठा, मिथ्या तथा आत्म- प्रवंचना पूर्ण है।

यों तो संसार के सभी धर्मों में प्राणियों पर दया करने को पुण्य और उनको मारना, सताना अथवा अत्याचार करना पाप बतलाया गया है किन्तु हिन्दू धर्म तो पूर्णरूप से दया, करुणा, सहानुभूति एवं संवेदना के आधार पर ही खड़ा है। पशु-हिंसा को तो हिन्दू धर्म में सबसे बड़ा पाप बतलाया गया है और अहिंसा को परम धर्म। जो हिंसक, क्रूर अथवा निर्दयी है वह लाख पूजा-पाठ, जप तप और दान-पुण्य क्यों न करे, उसको अधर्मी ही कहा जायेगा।

क्रूरता संसार में सबसे बड़ा पाप है। किसी प्राणी के प्रति क्रूरता का व्यवहार करने वाला एक प्रकार से अपनी ही आत्मा के प्रति क्रूरता का व्यवहार करता है। संसार के समस्त प्राणियों में एक ही आत्मा का निवास रहता है। जो आत्मा हममें है वही आत्मा अन्य पशु-पक्षियों में भी है। जब हम किसी पशु-पक्षी की आत्मा को दुःख पहुँचाते हैं तो स्वयं अपनी आत्मा को दुःख पहुंचाते है। यह बात दूसरी है कि हम अभ्यासवश उस दुःख को बिल्कुल उसी प्रकार अनुभव न कर सकें जिस प्रकार सताया जाने वाला प्राणी अनुभव कर रहा होता है। जिनका हृदय हिंसा से कठोर नहीं हो गया होता है, सहृदयता एवं सहानुभूति—संवेदना का जिनका मानवीय गुण नष्ट नहीं हो गया होता है वे सज्जन पुरुष परपीड़ा को उसी प्रकार अपने में अनुभव कर लेते हैं जिस प्रकार कि पीड़ित प्राणी। यही कारण है कि सहृदय व्यक्ति दूसरे को दुःखी देखकर तत्काल करुणा तथा दयार्द्र होकर रोने तक लगते हैं। यथासम्भव उसी तरह उसका दुःख दूर करने का प्रयत्न किया करते हैं जिस प्रकार अपना निजी दुःख, और जब उसका कष्ट दूर हो जाता है तब वैसे ही प्रसन्न होते हैं मानों उनका स्वयं का दुःख दूर हुआ है। पर दुःख कातरता मनुष्यता का असंदिग्ध लक्षण है, जिसमें इसका सर्वथा अभाव पाया जायेगा, उसको मनुष्य कह सकना कठिन ही होगा।

किसी बड़े प्रयोजन के लिए यदि अनिवार्य ही हो तो किसी प्राणी के लिए उचित ताड़ना अथवा दण्ड की व्यवस्था किसी हद तक उचित मानी जा सकती है, किन्तु किसी को स्वार्थवश अथवा यों ही मनोरंजनार्थ सताना अमानवता पूर्ण अपराध है जो किसी प्रकार भी क्षम्य नहीं कहा जा सकता।

यद्यपि मनुष्य की पाशविक अथवा आदिकालीन क्रूर प्रवृत्तियों में बहुत कुछ परिवर्तन आ गया है, वह किसी दूसरे को कष्ट देने का परिणाम तथा उसकी पीड़ा का भी अनुमान करने लगा है। वह यह भी भली प्रकार जानता है कि पशुओं के प्रति उसका व्यवहार वैसा नहीं है जैसा मनुष्य जैसे विवेकशील प्राणी को अन्य मूक प्राणियों के साथ करना चाहिए। किन्तु स्वार्थ रूपी पिशाच से ग्रसित अनेक मनुष्य अपनी अन्तरात्मा की भर्त्सना की उपेक्षा करके पशु-पक्षियों के साथ अन्याय एवं अत्याचार करने में संकोच नहीं करते। इस प्रकार जान-बूझकर स्वार्थ के लिये किया हुआ पाप उन्हें किस घोर नरक की ओर ले जायेगा, इसका अनुमान कर सकना कठिन नहीं हैं।

आज अपने को ईश्वर का पुत्र कहने वाला मनुष्य ईश्वर के अन्य पुत्र,प्राणियों पर कितना निर्दय अत्याचार कर रहा है यह देख-सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जिह्वा के अनार्य स्वार्थ के लिये पशु-पक्षियों को मारना तो एक साधारण-सी बात रही है। माँस भोजन की जंगली प्रवृत्ति अभी तक कुछ मनुष्यों में बनी हुई है, जिसकी प्रेरणा से वे अपनी इस आदिम प्रवृत्ति को नहीं छोड़ पा रहे हैं। यह आदिम प्रवृत्ति परम्परागत होकर अनेक परिवारों एवं समाजों में संस्कार बनकर चली आ रही है। यदि मनुष्य थोड़ा-सा प्रयत्न करे, हिंसा की अधार्मिकता तथा माँस-भोजन की हानियों को समझ ले तो कोई कारण नहीं कि उसे माँस खाने से घृणा न हो जाये। जिस प्रकार उसने आदिम काल की अनेक अवाँछित प्रवृत्तियों का त्याग कर दिया है उसी प्रकार वह माँसाहार का भी त्याग कर सकता है। माँस भोजन के लोभ से जो प्राणियों को मारते हैं वे तो अपराधी हैं ही, किन्तु जो यों ही मनोरंजन अथवा बन्दूक का निशाना साधने के लिए निर्दोष एवं निरपराध पशु-पक्षियों के प्राण लेते हैं, उन्हें क्या कहा जायेगा। वास्तव में यह कितना क्रूर कर्म है? अकारण ही दिल खुश करने के लिये, डाल पर असावधान बैठे हुए पक्षी अथवा जंगल में निश्चिन्त चरते हुए किसी पशु पर गोली चलाकर मिट्टी के ढेले की तरह नष्ट कर देने वालों का हृदय कितना क्रूर होता है, इसका अनुमान तो वही सहृदय व्यक्ति कर सकता है जो अपनी पीड़ा की तरह दूसरे की पीड़ा और अपने प्राणों की तरह दूसरे के प्राणों को जानता है। संसार में एक क्या हजारों तरह के मनोरंजन हो सकते हैं, तब किसी निर्दोष जीव के प्राणों से खिलवाड़ करने का पाप करने की क्या आवश्यकता है ? इस बात पर बन्दूकबाजों को विचार करना ही चाहिए।

जहाँ एक ओर अनेक क्रूर व्यक्ति पशु-पक्षियों को मारकर मनोरंजन करते हैं वहाँ बहुत-से सहृदय व्यक्ति उन्हें पालने-पोसने और खिलाने-पिलाने में मनोरंजन मानते हैं। वास्तव में इस प्रकार के दयावान व्यक्ति अपने परमपिता परमात्मा के कितने प्यारे पुत्र होंगे। जहाँ वह उन दारुण पुत्रों को देखकर खेद करता होगा वह इन करुण कुमारों को देखकर शीतलता का अनुभव करता होगा। इस वैभिन्य से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि उसका कौन-सा पुत्र उसके स्वर्ग-राज्य का अधिकारी बनेगा और कौन-सा उसके कारागार नरक की यातना भोगेगा।

यथा-स्थान पशु-पक्षियों को स्वच्छन्दतापूर्वक खेलते-खाते, उड़ते-गाते देखकर ही उनका हृदय उतना ही प्रफुल्लित हो जाता है जितना कि उन खेलते, खाते और उड़ते हुए प्राणियों का होता है। ऐसे प्रेमी पुरुष परमात्मा के सत्पुरुष ही नहीं उनके प्रतिनिधि ही माने जायेंगे। यदि किसी पुण्यात्मा को स्वर्ग प्राप्त हो सकता है तो ऐसे सर्व संवेदनशील सत्पुरुषों को परमपिता का साक्षात् सान्निध्य ही प्राप्त होगा जो पशु-पक्षियों को मारना अथवा अपने पास रखने के बजाय स्वच्छन्दतापूर्वक खेलते-खाते देखकर ही ऐसे प्रसन्न होते हैं जैसे उनके छोटे भाई-बहन ही खेल-कूद रहे हों। ऐसी संवेदना, सहानुभूति, सहृदयता एवं आत्मशीलता रखने वालों का यह मानव-जीवन धन्य हो जाता है।

विचार करने का विषय है कि जब हम किसी मेले-ठेले में जाते हैं तो मिट्टी अथवा कागज, कपड़े के बने पशु-पक्षियों को हाट में देखकर खुश हो जाते हैं। उन्हें पैसे देकर खरीद लाते हैं। घरों में अलंकरण की तरह सजा कर रखते हैं, रक्षा करते हैं, उन्हें तोड़ने अथवा खराब करने के लिये बच्चों तक पर नाराज होते हैं और यदि धोखे से टूट जाते हैं तो दुःख करते हैं। तब साकार, सजीव और नाचते-गाते हुए पशु-पक्षियों को मारना, सताना अथवा उन्हें अन्य प्रकार से नष्ट करना कहाँ तक शोभनीय है ? संसार के प्राणियों पर अत्याचार करने वालों को, उन्हें सताने और मारने वालों को अपनी वृत्तियों का आप विवेचन करना चाहिए और देखना चाहिए कि ऐसी कौन-सी वृत्तियाँ हैं जिन्हें स्वार्थरूपी पिशाच ने विकृत कर रखा है, ऐसी कौन-सी वृत्तियाँ हैं जो अज्ञान द्वारा उत्तेजित की जाती हैं और वे वृत्तियाँ कौन-सी हैं जो असभ्य कालीन हैं? पता चलने पर मनुष्य को उन सारी दूषित वृत्तियों को निकाल फेंकना चाहिए जो हमें हिंसा-पाप के प्रति प्रेरित करती हैं क्योंकि इस प्रकार की पाप-परायण प्रवृत्तियाँ मनुष्य को देवत्व की ओर तो नहीं ही बढ़ने देती, आत्मा को कलुषित कर मनुष्यता से भी पतित कर देती हैं।

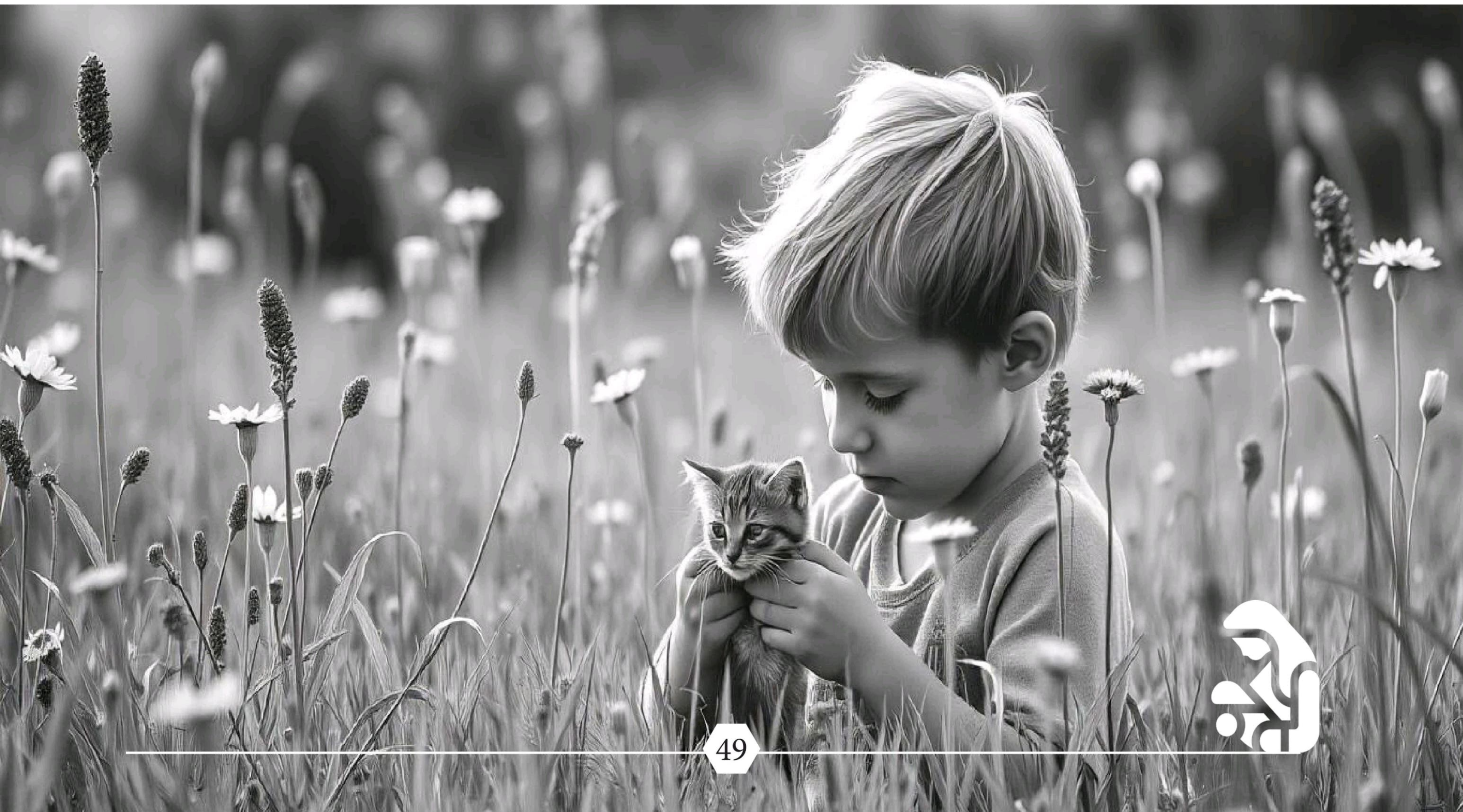

नभक्षयतियोमांसनचहन्यान्नघातयेत् । तंमित्रंसर्वभूतानांमनुःस्वायम्भुवोऽब्रवीत् ।।

- महाभारत अनुशासन पर्व ११५।१०

स्वायंभुव मनु का कथन है कि संसार का सच्चा हितैषी वह है जो न तो मांस खाता है और न पशुओं की हिंसा करता या करवाता है ।

पहेली ?

धन दौलत से बड़ी हूँ, सब चीजों से ऊपर हूँ, जो पाए पंडित बन जाए, जो ना पाए मूर्ख कहाये ।

दयालु राजकुमार सिद्धार्थ

बहुत प्राचीन समय की बात है। भारत में कपिलवस्तु नाम की एक बड़ी सुन्दर नगरी थी। उस समय राजा शुद्धोदन वहाँ राज्य करते थे । ये बड़े धार्मिक और न्याय- प्रिय राजा थे । उनके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम सिद्धार्थ रखा गया ।

जब सिद्धार्थ बड़े हुए, तो एक बार वे मंत्री- पुत्र देवदत्त के साथ धनुष- बाण लिए घूम रहे थे । संध्या समय था। सूर्य अस्त हो रहा था। आकाश में लाली छा गई थी। बड़ा मनोहर दृश्य था। पक्षी आकाश में उड़े जा रहे थे। सहसा सिद्धार्थ की दृष्टि दो राज- हंसों पर पड़ी और देवदत्त से बोले- देखो भाई, ये कैसे सुन्दर पक्षी है। देखते ही देखते देवदत्त ने कान तक खींचकर बाण चलाया और उनमें से एक पक्षी को घायल कर दिया। पक्षी भूमि पर गिरकर छटपटाने लगा। सिद्धार्थ ने आगे बढ़कर उसे अपनी गोद में ले लिया और पुचकारने लगा । देवदत्त ने अपना शिकार हाथ से जाते देख सिद्धार्थ से कहा कि इस पर मेरा अधिकार है, इसे मैंने मारा है । सिद्धार्थ ने राजहंस के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा कि बेशक तुमने इसे मारा है, परन्तु मैंने इसे बचाया है। इसलिए यह पक्षी मेरा है।

राजकुमार सिद्धार्थ ने पक्षी की सेवा की उसकी मरहम- पट्टी की और उसे चारा दिया। समय पाकर पक्षी स्वस्थ होने लगा। फिर एक बार देवदत्त ने सिद्धार्थ से कहा कि मेरा पक्षी मुझे दे दो, परन्तु सिद्धार्थ नहीं माना। लाचार हो देवदत्त ने महाराज के पास जाकर न्याय की पुकार की। महाराज ने दोनों को दरबार में बुलाया।

राजकुमार सिद्धार्थ राजहंस को गोद में लिए हुए राज- दरबार में पहुँचे । पक्षी डर के मारे कुमार के शरीर से चिपट रहा था । महाराज ने देवदत्त से पूछा कि अब तुम अपनी बात कहो । इस पर देवदत्त ने कहा - महाराज! इस पक्षी को मैंने अपने बाण से मारा है, इसलिए इस पर मेरा अधिकार है । आप चाहें तो, कुमार सिद्धार्थ से ही पूछ लें।

महाराज की आज्ञा पाकर राजकुमार सिद्धार्थ ने खड़े होकर माथा झुकाकर नम्रता से कहा- हे राजन् ! यह तो ठीक है कि यह पक्षी देवदत्त के बाण

से घायल हुआ है, पर मैंने इसे बचाया है । मारने वाले की अपेक्षा बचाने वाले का अधिक अधिकार होता है। इसलिए यह पक्षी मेरा है।

अब राजा बड़ी सोच में पड़े। देवदत्त का अधिकार जताना भी ठीक था और सिद्धार्थ का भी। राजा कोई निर्णय न कर सके। अंत में एक वृद्ध मन्त्री ने उठकर कहा कि हे महाराज ! इस पक्षी को सभा के बीच में छोड़ दिया जाए। दोनों कुमार बारी- बारी से इसे अपने पास बुलाएँ। पक्षी जिसके पास चला जाए , उसी को दे दिया जाए। यह विचार सबको पसंद आया।

अब पक्षी को सभा के ठीक बीच में छोड़ दिया गया। एक कोने पर सिद्धार्थ खड़े हुए और दूसरे कोने पर देवदत्त। पहले देवदत्त की बारी थी, उसने पक्षी को बड़े प्रेम से बुलाया, परन्तु वह डर के मारे उससे और दूर हट गया। ज्यों- ज्यों वह बुलाए , पक्षी डर से सिकुड़ता जाए । अंत में देवदत्त हताश हो गया, अब कुमार सिद्धार्थ की बारी थी। ज्योंही उन्होंने प्यार भरी आँखों से पक्षी की ओर देखकर हाथ फैलाया और उसे बुलाया, त्यों ही वह धीरे- धीरे चलता हुआ अपने बचाने वाले की गोद में आकर बैठ गया। हंस सिद्धार्थ को दे दिया गया। कुमार सिद्धार्थ उस पक्षी की दिन- रात सेवा करने लगे। कुछ दिनों बाद राजहंस पूर्ण स्वस्थ होकर उड़ गया।

जानते हो ये कुमार सिद्धार्थ कौन थे? यही बाद में राजपाट छोड़कर गौतम बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुए, जिन्होंने अहिंसा का पाठ सारे संसार को पढ़ाया। आज भी चीन, जापान आदि कई देश बौद्ध मत को मानते हैं। प्रतिवर्ष वैशाख पूर्णिमा पर हम उनकी जयंती मनाते हैं।

पहेली का उतार – विद्या

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी । संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेतिघातकाः ।।

- मनुस्मृति ६ । ६१

मांस खाने की सम्मति देने वाला, काटने वाला, मारने वाला, बेचने वाला, खरीदने वाला, पकाने वाला, लाने वाला और खाने वाला ये सभी हिंसक होते हैं । केवल मांस खाने वाला ही घातक नहीं होता ।

पहेली ?
किस सवाल का जवाब हर क्षण बदलता रहता है ?

दयालु राजा शिवि

फिर क्या था राजा इंद्र ने एक बाज का रूप धारण किया और अग्नि देव ने एक कबूतर का । दोनों राजा शिवी के दरबार की ओर चल दिए । अग्निदेव कबूतर के रूप में आगे गए और इंद्र बाज के रूप में इस प्रकार उनके पीछे चले कि मानों एक बाज कबूतर का शिकार करने के लिए उसके पीछे उड़ रहा हो ।

थोड़ी ही देर में अग्निदेव कबूतर के रूप में राजा शिवी के दरबार में पहुंचे और राजा शिवि की जांघ पर बैठ गए । उन्होंने राजा से कहा कि एक बाज उसका शिकार करने के लिए पीछे आ रहा है, वह उसकी जान बचा लें । कबूतर की यह बात सुनकर राजा ने कहा- 'बिल्कुल भी चिंता न करो । मेरे होते हुए वह बाज तुम्हारा कुछ भी बिगाड़ नहीं पाएगा । मैं तुम्हारी रक्षा करने का वचन देता हूँ ।'

राजा के वचन देते ही बाज के रूप में इंद्र देव भी शिवी के दरबार में पहुंच गए । उन्होंने राजा शिवी से कहा कि वह कबूतर मेरा शिकार है । उसे मारकर वह अपनी और अपने बच्चों की भूख मिटाएगा ।

बाज की बात पर राजा ने कहा- 'मैंने इस कबूतर को वचन दिया है कि मैं इसके प्राणों की रक्षा करूंगा । इसलिए, मैं इसे तुम्हें नहीं दे सकता ।'

राजा की यह बात सुनकर बाज बोला- 'अगर आप इसे मुझे नहीं देंगे, तो मैं और मेरे बच्चे भोजन के अभाव में भूखे रह जाएंगे । इसलिए, इसे तो आपको देना ही होगा ।'

बाज की यह बात सुन राजा शिवि थोड़ी देर सोच में पड़ गए और कुछ विचार करने लगे । कुछ देर विचार करने के बाद राजा शिवि ने बाज से कहा- 'अगर मैं तुम्हें इस कबूतर के वजन के बराबर मांस दे दूं, तो तुम्हारी और तुम्हारे बच्चों की भूख मिट जाएगी । ऐसे में इस कबूतर के प्राण भी बच जाएंगे और मेरा वचन भी बना रहेगा ।'

राजा कि इस बात पर बाज के रूप में आए इंद्र देव राजी हो गए, लेकिन उन्होंने राजा के सामने एक शर्त रख दी । बाज ने कहा- 'महाराज मैं तैयार हूँ, लेकिन आपको कबूतर के वजन का मांस अपने शरीर से देना होगा ।'

बाज की यह बात सुनकर राजा ने सोचा कि कबूतर का वजन कितना होगा। अगर मैं अपने शरीर से ही इसके वजन के बराबर मांस दे देता हूँ, तो इस कबूतर की जान बच जाएगी। यह सोचकर राजा ने अपने एक दरबारी को एक तराजू लाने का आदेश दिया।

दरबार में तराजू लाया गया। राजा ने तराजू के एक पलड़े पर कबूतर को रखा और एक चाकू से अपनी जांघ से एक टुकड़ा काट कर तराजू के दूसरे पलड़े पर रख दिया, लेकिन तराजू तनिक भी नहीं हिला। यह देखकर राजा ने एक और टुकड़ा काटकर तराजू पर रखा। उसके बाद भी मांस का टुकड़ा कबूतर के वजन से काफी कम था।

उन्होंने धीरे-धीरे कर अपने आधे शरीर के मांस को निकाल कर तराजू पर रख दिया, उसके बाद भी मांस का वजन कबूतर के वजन से कम ही रहा। यह देखकर राजा शिवी बहुत निराश हुए। उन्होंने निश्चय किया कि अब कुछ भी हो जाए, वह अपने वचन का मान रखते हुए कबूतर को बचाएंगे।

यह सोचकर वह खुद ही तराजू के पलड़े पर बैठ गए और तराजू पर कबूतर का पलड़ा ऊपर आ गया। राजा ने बाज से कहा- 'तुम मेरे पूरे शरीर का मांस ले लो और कबूतर को छोड़ दो।'

यह सुनकर इंद्र देव को राजा पर दया आ गई। इंद्र और अग्निदेव अपने असली रूप में आए और कहा- 'राजा शिवि हम आपकी परीक्षा लेने आए थे और आप इस परीक्षा में सफल रहे। आप वाकई में बहुत ही दयालु और परोपकारी हैं। इस पृथ्वी पर आपकी बराबरी दूसरा और कोई नहीं कर सकता।' इतना कहते हुए दोनों देव वहां से गायब हो गए।

शिवि चक्रवर्ती की कहानी से सीख

शिवि चक्रवर्ती की कहानी से सीख मिलती है कि इंसान को किसी भी हाल में दया और परोपकार का साथ नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि जिसमें दया और परोपकार वास करता है, भगवान भी सदैव उसकी मदद के लिए तैयार रहते हैं।

पहेली का उत्तर – समय क्या हुआ है ?

कहानी

सप्तम दिवस

अहिंसापरमोधर्मस्तथाऽहिंसापरंतपः । अहिंसापरमंसत्यंयतोधर्मः प्रवर्तते ॥

- महाभारत अनुशासन पर्व ११६/२३

अहिंसा ही परम धर्म है, अहिंसा ही श्रेष्ठ तप और अहिंसा ही सत्य है क्योंकि उसी से धर्म में मन लगता है ।

पहेली ?

आम के पेड़ के नीचे अंधा, गूंगा, लंगड़ा और बहरा बैठे हैं । आम गिरा तो सबसे पहले कौन उठाएगा ?

गायों की गोष्ठी

उस दिन एक बड़े चरागाह में बहुत-सी गाएँ इकट्ठी हुई । गायों के झुंड से पूरा चरागाह भर गया । हरी-हरी घास चरतीं, इधर-उधर घूमतीं , रँभातीं , जुगाली करतीं गाएँ बड़ी ही प्यारी लग रही थीं ।

बरसात का मौसम था । आसमान में हलके-हलके बादल छाए थे । ठंडी - ठंडी हवा बह रही थी । जब पेट भर चुका तो सारी गाएँ जुगाली करने आस-पास घेरा बनाकर बैठ गई ।

बूढ़ी सोना गाय उस दिन उदास बैठी थी । नीला से न रहा गया, वह बोली - "क्या बात है चाची! आज तो तुम बहुत ही सुस्त बैठी हो, बीमार हो क्या ?"

सोना ने सिर ऊपर उठाया । सारी गाएँ आपसी बातचीत बंद करके उसकी ओर देखने लगीं । सोना कहने लगी" क्या बताऊँ बच्चियों तुम्हें! अब मैं बूढ़ी होती जा रही हूँ न मालिक को दूध भी नहीं दे पाती । दूध न पाने के कारण मैं मालिक के लिए बेकार हो गई हूँ । वह मुझे दुत्कारते ही रहते हैं । डर है कि कहीं किसी कसाई को ही न दे दें । मैं तो भगवान से हर पल बस अपनी मौत की कामना करती रहती हूँ ।"

यह सुनकर काली गाय को बड़ा गुस्सा आया । वह अपने सींगों को जोर से हिलाती हुई बोली-"यह मनुष्य बड़े ही स्वार्थी होते चले जा रहे हैं । तुम्हारे मालिक के सारे बच्चे तुम्हारे ही दूध से पलकर बड़े हुए हैं । एक प्रकार से तुम उनकी माँ हुई । तुम पर अत्याचार करने में उन्हें शरम आनी चाहिए ।"

पीला बोली - " मैं तो एक बात पूछती हूँ कि उनके माता-पिता बुड्ढे और अनुपयोगी हो जाएँगे तो वे उन्हें भी किसी कसाई को पकड़ा देंगे ?"

" यही तो सोचने की बात है ।" श्यामा ने कहा । श्वेता बोली - " मैंने सुना है कि हजारों वर्ष पहले भारतवर्ष के निवासी हमें माँ कहते थे । माँ के समान हमारी पूजा और सम्मान करते । हम पर, हमारे बैल और बछड़ों पर उनकी सारी अर्थव्यवस्था आधारित थी । गौ-पालन और कृषि ही उनकी जीविका का प्रमुख साधन था । " सोना और काली गरदन धीरे-धीरे हिलाकर बोलीं- "सभी जीव-प्राणियों में एक ही आत्मा निवास करती है । सभी को सुख-दुःख की समान रूप से अनुभूति होती है । फिर मनुष्य न जाने क्यों हम पशुओं से बुरा व्यवहार करते हैं ?"

" तुम इनके दुर्व्यवहार की बात न कहो बहन ! मेरी भी सुनो, कि ये दुष्ट तो मेरे नन्हें बछड़े को दूध नहीं पीने देते । बछड़ा बेचारा रँभाकर रह जाता है । बचा खुचा, दस बारह बूंद भर दूध ही उसे मिल पाता है ।" काली ने कहा ।

पीला बोली- " और मुझे मालिक पेट भर खाना नहीं देते । बस हरदम यही कोशिश करते हैं कि कैसे भी, अधिक से अधिक दूध मेरे थनों से निचोड़ लें ।"

श्वेता ने कहा - " मेरे मालिक के बच्चे इतने शरारती हैं कि कभी मेरी पूँछ मरोड़ते हैं, तो कभी तंग करने के लिए डंडे मारते हैं । मालिक हैं कि उनकी करतूत पर हँसते रहते हैं । उनसे मना तक नहीं करते, उनकी भाषा में बोल नहीं सकते तो क्या ? हम में भी प्राण हैं, हमें भी तो कष्ट होता है ।"

" बच्चे भला क्या जानें, क्या उचित है, क्या अनुचित ? बच्चों को तो बचपन से ही सिखाना पड़ता है । यदि माता-पिता ऐसा नहीं करते, तो बच्चे बिगड़ेंगे ही, साथ ही वे भी किसी दिन खूब पछताएँगे । " आभा बोली ।

नंदा कह रही थी - " पिछले सप्ताह की ही बात है । मैं बहुत ही बीमार पड़ गई । पूरे छह दिन मैंने कुछ नहीं खाया । मेरा मालिक यों तो पुचकारता रहा, पर उससे यह नहीं हुआ कि मुझे किसी डाक्टर को दिखा भी दे । कोई जड़ी-बूटी ही मुझे ला देता । घर में कोई बीमार पड़ता है, तो क्या, उसके लिए दवा नहीं लाते ? "

सोना कहने लगी- " सभी के साथ कुछ न कुछ समस्या है ही । हम अपनी भाषा में आँखों में मौन-भाव भरकर इन मनुष्यों से न जाने क्या-क्या कहती हैं, पर लगता है मौन भावों को समझने में तो ये मनुष्य बिलकुल असमर्थ हैं या फिर ये समझकर भी नहीं समझना चाहते ।"

आभा ने गुस्से में भरकर खुरों से जमीन खोदते हुए कहा - " सुनो! सुनाती हूँ इन सब मनुष्यों की नृशंसता की पराकाष्ठा तुम्हें । मैंने सुना है कि गाभिन का गर्भ गिराकर, बिना जन्मे बछड़े की खाल से ये मनुष्य फैशन की चीजें, पर्स, सैंडिल आदि बनाते हैं । ये चीजें बिकती भी खूब महँगी हैं ।"

" ओह यह तो राक्षसी प्रवृत्ति अत्याचार की अति है ।" सभी गायें दुःख से कराहकर एक साथ चिल्ला उठीं । " कौन समझाए इन मनुष्यों को कि अपनी फैशन के लिए, झूठी शान के लिए वे न जाने कितने निरीह प्राणियों को दुःख देते हैं, उनकी हत्या कर देते हैं । फैशन, झूठी शान के नाम पर वे कम से कम जानवरों की खाल से बनी ऐसी चीजें तो न अपनाएँ, जिनमें किसी निरीह प्राणी की आँहें बसी हों ।" पीला ने बड़े ही वेदना भरे स्वर में कहा ।

काली बोली - " हमें भी इन मनुष्यों की भाषा आती, तो उनसे कहते कि हम जीवन भर तो पूरी शक्ति से, पूरे मन से तुम्हारी सेवा करते हैं । जो दूध वास्तव में हमारे बच्चों के लिए हैं, वह सारा का सारा तुम्हें दे देते हैं । हमारा गोबर तक तो तुम्हारे लिए बेकार नहीं है । उससे तुम अच्छी खाद बनाते हो, कंडे बनाकर ईंधन का काम लेते हो । मर जाने पर हमारी खाल तुम्हारे काम आती है । फिर तुम सबका भी यह कर्त्तव्य हो जाता है कि हमारे साथ बुरा व्यवहार न करो । हमें भरपेट खाना दो । हम पर बात-बात पर डंडे मत बरसाओ । दूध न देने पर भी हमारा पालन करो । हमारी पहली सेवाओं को याद करके हमें कसाई को न पकड़ाओ । हम भी प्राणी हैं, हमें भी दुःख पहुँचता है । हमारे साथ वह व्यवहार न करो, जो तुम्हें अपने लिए पसंद नहीं ।"

तभी दूर बैठा, बाँसुरी बजाता नंदू ग्वाला गायों को घर ले चलने के लिए आ गया । "भगवान इन मनुष्यों को सद्बुद्धि दे कि वे जीवों पर दया करें ।" सोना ने कहा और सारी गायें घर चलने के लिए उठ खड़ी हुई ।

पहेली का उत्तर – गूंगा

माँसाहार का परिणाम

दर्द पेट में बहुत हुआ था - मन भी था भारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

मैंने देखा मुझसे बोला, आकर वह अति पास ।
चलो मित्र ! घूमेंगे, क्यों हो इतने अधिक उदास ।।
मैंने पूछा "कहीं चलोगे ? रजनी अँधियारी "
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

छाया सी आकृति बोली "तुम चले चलो बस साथ ।
अगर लगे डर-लो पकड़ो तुम आकर मेरा हाथ ।।
चलने लगा साथ उसके मन में था डर भारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

साहस करके पूछा मैंने बतलाओ तुम कौन ?
जो मुझको यो साथ ले चले, अब हो बिल्कुल मौन ।
कहीं ले चले हो बोलो तो बुद्धि मेरी हारी ।।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

वह बोला हँस कर" मैं हूँ वह माँस -जो लिया प्रात ।
कटने से पहले मेरा भी था सुंदर-सा गात ।।
पर मुझको काटा कसाई ने वह अत्याचारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

फिर तुम लाए मुझे बनाया खुश हो कर खाया ।
यह न विचारा इस में भी परमात्मा की छाया ।।
आत्मा सब की एक, विचारो! मानव सुविचारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

अब तो मैं तव उदर समाया मित्र बने हम आज ।
कैसे जीवित तन कटते हैं, देखो वे सब साज ।।
कैसे प्राण निकलते है देखें मांसाहारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

उसकी बातें सुनकर मैंने हाथ छुड़ाया हाल ।
पर उसने फिर पकड़ लिया हो कर सतर्क तत्काल ।।
कहने लगा देख भी लो तुम यह दुनियाँ न्यारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

तब तक पहुँच चुके थे हम बूचड़ खाने के पास ।
कहीं दॉत और बाल पड़े थे बहुत भरी थी बास ।।
मक्खी भिन-भिन करती थी, दम घुटती सारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

कहा डाट कर मैंने उस छाया से "छोड़ो हाथ" ।
बोला वह मैं उदर बसा अब अडिग हमारा साथ ।।
सुबह तुम्हें काटेंगे तब होगी पक्की यारी ।।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

इस गंदेपन से ही घबरा बैठे पुरुष सुजान ।
जब खाया है मुझे, मेरी गति से क्यों रहो अजान ।।
जब हँसना जल्लाद करेगा अपनी तैयारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

कैसे प्राण निकलते है यह स्वाद जरा चखना ।
कैसे गात तड़पता है यह भी तो तुम लखना ।।
कैसी व्यथा वेदना होती, हमें मरण कारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

चिल्लाया मैं बड़े जोर से "मुझे बचाओ दौड़ ।
पूरी शक्ति लगाकर भागा, बकरे का कर छोड़ ।।
चीख सुनी तो जाग गए घर के सब नर-नारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

पूछा सबने "कहाँ ? क्या हुआ ? देखा कोई स्वप्न ?"
मैं भी सम्हल गया था अब तक स्वप्न हुआ था भग्न ।।
चेतनता लौटी तो ली अब सांस अभयकारी ।।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी।।

बतलाया सबको जो देखा-वह मानसिक प्रहार ।
लिया तभी संकल्प करूँगा कभी न मांसाहार ।।
अल्प स्वाद के हेतु, धर्म की बाजी थी हारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

सकल जीवधारी समान हैं, व्यथा सभी की एक ।
कभी किसी को कष्ट न दें हम, है मार्ग यही नेक ।।
लें हम काम, विवेक बुद्धि से, मानव तन धारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

विश्व, बगीचा, परमात्मा का-मानव है माली ।
बुद्धि मिली सबसे ज्यादा-करने को रखवाली ।।
तम में भटके नहीं, ज्ञान की फैले उजियारी ।
बहुत पछताए थे हम आज स्वाद ने कैसी मति मारी ।।

- माया वर्मा

गीत

विश्वशांति का नारा

चलो लगायें सब बच्चे मिल विश्व शांति का नारा।
"इस दुनियाँ का हर मानव है प्यारा मित्र हमारा" ।।

हम बच्चों का निर्मल मन कब भेद भाव करता है।
अपने जैसा समझ सभी को खुशियों से भरता है।।

हम जैसे हैं वैसा ही है, अपने हित जग सारा।
इस दुनियाँ का हर मानव है प्यारा मित्र हमारा ।।

यहाँ न कोई गोरा-काला, पंजाबी, मद्रासी ।
सब हैं ईश्वर की घरती के भोले भाले वासी ।।

सबको हो सबकी ममता का सबसे बड़ा सहारा।
इस दुनियाँ का हर मानव है प्यारा मित्र हमारा ।।

जब हम सबको मित्र समझ लेंगे, तो किसे छलेंगे ?
अरे ! मित्र के लिए हृदय में बस सद्भाव पलेंगे ।।

मन की कटुता मिट जायेगी छलकेगा मधु प्यारा।
हृदय-हृदय में सिर्फ प्यार की लहरायेगी गंगा ।।

चलो मित्र ! इस धरती को ही स्वर्ग बनाएँ दुबारा ।
इस दुनियाँ का हर मानव है प्यारा मित्र हमारा ।।

- माया वर्मा

अभ्यास के बिंदु

- किसी भी जीव को कष्ट न दें ।
- स्कूल के विभिन्न स्टाफ सदस्यों को धन्यवाद कहें ।
- प्यासे को पानी पिलाएं।
- अपने काम स्वयं करें, अपनी थाली साफ करें, बिस्तर घड़ी करें, सामान व्यवस्थित रखें।
- मिले हुए उपहारों को दान करके, दूसरों को खुशी प्रदान करें ।
- अपने मित्र को एक नयी युक्ति सिखाएं जो आपने सीखी हो।
- बस चालक को 'धन्यवाद' कहें।
- बुज़ुर्ग लोगों की सेवा एवम् मदद करें ।
- अपने बीमार मित्र के शीघ्र स्वस्थ होने की प्रार्थना करें ।
- बड़ों का अभिवादन अवश्य करें चाहे वे रिश्तेदार हो, पड़ोसी, दुकानदार, चौकीदार, सब्जी वाला आदि ।
- हर दिन कुछ न कुछ बचत करें और इसे किसी आवश्यक कार्य के लिए ही उपयोग करें।
- अपने जन्म दिवस पर एक पौधा अवश्य लगाएं।
- पक्षियों को दाना खिलाएं।

अखिल विश्व गायत्री परिवार
शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार

हमारे रचनात्मक अभियानों व कार्यक्रमों हेतु संपर्क करें

youth.awgp.org

FOR ACTIVITIES OF YOUTHCELL

9258360962 9258360652

युवा प्रकोष्ठ, शान्तिकुञ्ज-हरिद्वार

VP 86